है—**अपरेयमितस्त्वन्यां**—'यह मेरी अपरा प्रकृति है।' **प्रकृतिं विद्धि मे पराम्। जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्।।** 'इससे परे मेरी एक अन्य जीवरूपा प्रकृति भी है।'

प्रकृति 'सत्त्व, रज और तम'—इन तीन गुणों से रचित है। इन त्रिविध गुणों से परे शाश्वत् कालतत्त्व है, जिसके नियन्त्रण और अध्यक्षता में गुणों के संघटन से कर्म की अभिव्यक्ति होती है। कर्म अनादिकाल से किया जा रहा है और हम सभी अपने कर्मों के अनुसार सुख-दुःख भोग रहे हैं। उदाहरणार्थ जो मनुष्य अथक परिश्रम और बुद्धिमत्ता से धन-संचय कर लेता है, वह सुख भोगता है, जबकि सम्पूर्ण धन खो बैठने वाला दुःख उठाता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हम इसी भाँति अपने-अपने कर्म के अनुसार सुख-दुःख भोगते हैं। इस का नाम 'कर्मतत्त्व' है।

ईश्वर, जीव, प्रकृति, शाश्वत् काल तथा कर्म—इन सब तत्त्वों का गीता में विशद विवेचन हुआ है। इनमें से ईश्वर, जीव, प्रकृति तथा काल नित्य हैं। प्रकृति की अभिव्यक्ति अस्थायी हो सकती है, परन्तु वह मिथ्या नहीं है। कतिपय दार्शनिकों का कथन है कि प्रकृति की अभिव्यक्ति मिथ्या है; पर भगवद्गीता का अथवा वैष्णवों का दर्शन ऐसा नहीं मानता। संसार की अभिव्यक्ति को मिथ्या नहीं माना जाता। वह सत्य अवश्य है, किन्तु साथ ही अस्थायी भी। इसकी तुलना आकाशगामी मेघ अथवा अन्न-पोषिका वर्षा ऋतु से की जाती है। जैसे ही वर्षा ऋतु व्यतीत हो जाती है अथवा मेघ चले जाते हैं, वर्षा से पोषित हुआ धान्य पुनः सूख जाता है। इसी प्रकार यह प्राकृत सृष्टि यथासमय प्रकट होती है, कुछ काल तक विद्यमान रहती है और समय होने पर पुनः विलुप्त हो जाती है। प्रकृति का कार्य ऐसा ही है। परन्तु यह चक्र नित्य भ्रमायमान् है। अतः प्रकृति को नित्य कहा है, मिथ्या नहीं। श्रीभगवान् ने स्वयं कहा है, ''यह मेरी प्रकृति है।'' यह अपरा प्रकृति श्रीभगवान् की भिन्ना शक्ति है। जीव भी श्रीभगवान् की शक्ति हैं; किन्तु वे अलग नहीं हैं, श्रीभगवान् से उनका नित्य सम्बन्ध है। इस प्रकार परमेश्वर, जीव, प्रकृति तथा काल—इन सब नित्य तत्त्वों का परस्पर सम्बन्ध है। पाँचवाँ तत्त्व—कर्म नित्य नहीं है। कर्मफल वस्तुतः अति पुरातन हो सकता है। हम अनादि काल से अपने शुभ-अशुभ कर्मफलों को भोग रहे हैं, पर हममें उस को बदलने की सामर्थ्य भी है। यह हमारे ज्ञान की पूर्णता पर निर्भर करता है। हम विविध कर्म कर रहे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इन सम्पूर्ण क्रियाओं के शुभ-अशुभ फल से मुक्ति के लिए किस प्रकार की क्रिया करनी है, इसका ज्ञान हमें नहीं है। 'भगवद्गीता' में इसका भी वर्णन है।

परमेश्वर परम चेतन हैं और उनके भिन्न-अंश होने के कारण जीव भी चेतन है। यद्यपि जीव और माया दोनों को प्रकृति (भगवत्-शक्ति) कहा गया है, पर इनमें से केवल जीव चेतन है, अपरा प्रकृति चेतन नहीं। दोनों में यही भेद है। अतएव 'जीव प्रकृति' को 'परा' कहा जाता है। कहने का भाव यह है कि जीव श्रीभगवान् के सदृश चेतन है। ऐसा होने पर भी श्रीभगवान् परम चेतन हैं, जबकि जीव के लिए ऐसा